अन्य संस्थायें

[१] २३ अनाथालय।
[२] ४७ विधवा आश्रम।
[३] ११ प्रेस।
[४] ३७ समाचार पत्र और मासिक पत्रिकायें।
[५] ४६ पुस्तकालय, उनके सिवा जो प्रत्येक समाज में होते हैं।

आर्यसमाज का संगठन

आर्य समाज का संगठन इतना दृढ़ और श्रेष्ठ है कि अनेक वार ब्रिटिश गवर्नमेन्ट को धोखा हुआ कि आर्य समाज धार्मिक नहीं किन्तु राजनैतिक संगठन है।

(१) प्रत्येक नगर में आर्य समाज स्थापित है।

(२) प्रत्येक प्रांत में एक एक प्रांतिक प्रतिनिधि सभा है।

(३) समस्त प्रांतिक प्रतिनिधि सभाओं के ऊपर एक सार्वदेशिक सभा है जो आर्यसमाज के संगठन की सबसे बड़ी सभा है। इसी अन्तिम सभा के आधीन एक आर्यसमिति है जिसका काम है कि प्रत्येक सरकारी और गैरसरकारी आक्रमणों से आर्यसमाज की रक्षा करे और एक दूसरी दलितोद्धार सभा है जो समस्त दलितों के सम्बन्ध में आवश्यक सुधार कर रही है।

आर्यसमाज के मन्तव्य और कार्य दोनों जनता के सन्मुख रखते हुए एक प्रश्न है जो सर्व-साधारण से किया जाता है कि क्या इन सेवाओं को करते हुए आर्यसमाज अधिकारी है कि उन का कृपाभाजन बने ? यदि हो तो फिर उन्हें तन, मन और धन प्रत्येक प्रकार से उनकी सहा-

यता करनी चाहिये।

याद रखने योग्य आप्त-वचन

(१) न मृत्यवे अवस्थे कदाचन।

(मैं कदापि नहीं मर सकता)।

(२) मैं आत्मा हूं शरीर नहीं।

(३) आत्मा अमर है इसलिये मैं अमर हूं।

(४) आत्मा को हथियार काट नहीं सकते इसलिये मैं मशीनगनों के भय से स्वतन्त्र हूँ।

(५) शरीर वस्त्र के सदृश हैं, आत्मा उसे सदैव बदलता रहता है।

(६) यदि इस्तेमाली वस्त्र (शरीर) उतार दिया जावे तो कुछ हानि नहीं, क्योंकि उसके बदले में बिलकुल नया वस्त्र (शरीर) मिल जाता है।

(७) मा गृधः कस्यस्वित् धनम्।
(किसी का धन अन्याय से मत लो।)

(८) अदीनाः स्याम शरदः शतम्।

(सौ वर्ष तक दीनता-रहित होकर जीवें)।

(९) भूमा वै तत्सुखम्।
(सुख ईश्वर में है)।

(१०) अत्याचार सहना पाप है।

(११) अत्याचार सहने से अत्याचार करने वाले पैदा होते हैं।

(१२) अत्याचार करने वाले की अपेक्षा अत्याचार का सहने वाला अधिक पापी होता है।

(१३) विद्या धर्मेण शोभते।
(विद्या की धर्म से शोभा होती है)।

(१४) ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।
(ब्रह्मचर्य और तप से विद्वान् मृत्यु को जीत लेता है)।

(१५) आत्मसाहाय्यं हि उत्तमम्।
(अपनी सहायता आप करना उत्तम है)।

(१६) सुहृद् आपत्काले हि संलक्ष्यते।

(आपत्काल में मित्र की जांच होती है)।

(१७) विना पुरुषकारेण दैवं न सिध्यति।
(पुरुषार्थ के विना प्रारब्ध नहीं बनता)।

(१८) कटुवचन का घाव बड़ा गहरा होता है।

(१९) सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते।
(सब दानों में विद्यादान श्रेष्ठ है)।

(२०) विद्या देने से बढ़ती है।

(२१) विद्या ददाति विनयम्।
(विद्या से नम्रता आती है)।

(२२) आलस्य को त्याग दो।

(२३) जो चाहे अधिकरस,सीख ईख से लेय,
जो तोसों अनरस करें, ताहि अधिक रस देय॥

(२४) कामातुराणां न भयं न लज्जा।
(कामी पुरुष को न भय और न लज्जा होती है)।

(२५) वरं मृत्युर्न पुनरपमानः।

(अपमान सहने से मरना अच्छा है)।

(२६) आपदर्थे धनं रक्षेत्।

(मुसीबत के वक्त के लिये धन रखना चाहिए)।

(२७) न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।

(धीर पुरुष न्याय के मार्ग से विचलित नहीं होते)

(२८) तन्मे मनःशिवसङ्कल्पमस्तु।

(मेरा मन अच्छे संकल्प वाला हो)।

(२९) जहां चाह है वहां राह है।

(३०) उतावला सो बावला।

(३१) आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः।

(विद्वान् वही है जो सबको अपने सदृश देखता है)

(३२) नहि सत्यात्परो धर्मः।

(सत्य से बढ़कर और कोई धर्म नहीं है)।

(३३) ओ३म् क्रतो स्मर।

(हे जीव ओ३म् का स्मरण कर)।

(३४) न्यायकारी निर्बल का भी समर्थन करो।

(३५) अन्यायकारी बलवान् के भी नाश करने का यत्न करो।

(३६) मन: सत्येन शुध्यति।
(सच बोलने से मन शुद्ध होता है)

(३७) असतो मा सद् गमय।
(ईश्वर ! मुझे असत् से दूर कर सत् की ओर ले चल)।

(३८) तमसो मा ज्योतिर्गमय।
(अन्धकार से बचाकर प्रकाश की ओर ले चल)।

(मृत्योर्माऽमृतम् गमय।
(मृत्यु से अमृत की ओर ले चल)।

(४०) प्राण जायं पर वचन न जाई।

(४१) देश की उन्नति के लिए अपनी सभ्यता को रखो।

(४२) मन के हारे हार है।

(४३) मन के जीते जीत।

(४४) धियो यो नः प्रचोदयात्।
(ईश्वर बुद्धि को प्रेरित करे)।

(४५) बुद्धिर्यस्य बलं तस्य (बुद्धि से बल प्राप्त होता है)।

(६४) विनाशकाले विपरीत बुद्धिः।
(मुसीबत आने पर बुद्धि खराब हो जाती है)।

(४७) जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।
(मातृ-भूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है)।

(४८) तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।
(तेजस्वी ईश्वर मुझे भी तेज देवे)।

(४९) बलमसि बलं मयि धेहि।
(बल वाला ईश्वर मुझे भी बल देवे)।

(५०) ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
(शक्तिमान् ईश्वर मुझे भी शक्ति देवे)।

(५१) मन्युरसि मन्युं मयि धेहि (दुष्टों के

दमन करने वाला प्रभु मुझे भी ऐसा बनावे)।

(५२) सहोऽसि सहो मयि धेहि।
(सहनशील प्रभु मुझे भी सहनशीलता देवे)।

(५३) ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।
(ब्रह्मचर्य का पालन करके कन्या अपने सदृश युवा वर को प्राप्त करे)।

(५४) यतो धर्मस्ततो जयः (जहां धर्म वहीं विजय है)।

(५५) धर्म एव हतो हन्ति (धर्म के विरुद्ध आचरण करने से मनुष्य का नाश होता है)।

(५६) धर्मो रक्षति रक्षितः।
(धर्मानुकूल आचरण करने से मनुष्य रक्षित रहता है)।

(५७) आचारः परमो धर्मः (सदाचार परम धर्म है)।

(५८) अन्यायकारियों के बल की हानि

और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें।

(५९) दया मनुष्य का दैवी भूषण है।

(६०) धर्म की बड़ी कमाई में बरकत रहती है।

(६१) मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।
(हम सबको मित्र की दृष्टि से देखें)।

(६२) ऋणकर्त्ता पिता शत्रुः।
(कर्ज लेने वाला पिता दुश्मन होता है)।

(६३) मैं उधार से ऐसा डरता हूँ जैसे लोग मौत से।

(६४) फिजूल खर्च हमेशा कष्ट सहते हैं।

(६५) सेवा धर्म बड़ा गहन धर्म है।

(६६) स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।

(६७) साहसे श्रीः प्रतिवसति (हिम्मत से धन प्राप्त होता है)।

(६८) आयादधिकं व्ययं मा कुरु (आमदनी से खर्च ज्यादा मत करो)।

(६९) बुभुक्षित: किं न करोति पापम् (भूखा कौन सा पाप नहीं करता)।

(७०) चरित्र का बीज बोकर उद्देश्य की फसल काट लो।

कुछेक चुने हुए भजन

भजन सं० २४

पिता जी तुम पतित उद्धारन हार।

दीन शरण कंगाल के स्वामी,

दु:ख के मोचन हार ॥ १ ।

इस जग मायाजाल भंवर में,

सूझे न सार असार ॥ २ ॥

सत्य ज्ञान बिन दीखे न कुछ भी,

करें असत्य आचार ॥ ३ ॥

पाप प्रवाह भयंकर जल में,
डूबत हैं मंझधार ॥ ४ ॥

तुम्हरी दया बिन को समरथ है,
करे दीनन को पार ॥ ५ ॥

भजन सं० २५

मोहन मन्त्र सिखादे मैया
मोहन मन्त्र सिखादे,

आ ! स्वर्गीय शांति की प्यारी,
अनुपम प्रभा सिखादे ।
मैया मोहन मन्त्र सिखादे ॥

हृत्तन्त्री के तार हिलादे,
जीवन शंख बजादे,
आशा का संगीत सुनादे,

साहस साज बजादे ।
मैया मोहन मन्त्र सिखादे ॥
मस्त बनादे, देश-प्रेम की
बूटी हमें पिलादे,
द्वेष हटादे, मोह घटादे
मरते हुए जिला दे ।
मैया मोहन मन्त्र सिखादे ॥
पौरुष-दीप जलादे, क्षण में,
बाधा विघ्न भगादे,
सोई हुई कला-कौशल को,
कौशलमयी जगादे ।
मैया मोहन मन्त्र सिखादे ॥

भजन सं० २६

ममता तू न गई मन ते,

पाकर तोह जन्म को साथी,
लाज गई लोकन तें ।
तन थाक्यो, कर कांपन लागे,
ज्योति गई नैनन तें,
ममता तू न गई मन ते ॥
श्रवन वचन न सुनत काहू के,
बल गए सब इन्द्रियन तें,
टूटे दसन वचन नहीं आवत,
सोभा गई मुखन तें,
ममता तू न गई० ॥
कफ. पित वात कंठ पर बैठे,
सुनहिं बुलावन करतें ।
भाई बन्धु सब परम प्यारे,
नाहिं निकारत घरतें,

ममता तू न गई० ॥
जैसे ससि-मण्डल विच स्याही
छूटे न कोटि जतन तें ।
तुलसी दास बलि जाऊं चरननतें,
लोभ पराये धन तें ॥
ममता तू न गई० ॥

भजन सं० २७

जलवा कोई देखे अगर इक बार तुम्हारा
हो जाय हमेशा को खरीदार तुम्हारा ॥
क्यों उसका कोई तार हो बेतार जो कोई ।
चिन्तन किया करता है लगातार तुम्हारा ॥
लवलीन हुआ तुम में मिटाकर जो दुई को ।
तुम यार उसी के हो वही यार तुम्हारा ॥

किस तरह जमीं चलती है सूरज के सहारे।
देखे कोई आलम में चमत्कार तुम्हारा ॥
फूलों की तरह खिलते हैं रातों में सितारे।
आकाश बना गुलशने बेखार तुम्हारा ॥
बुद्धि की पहुँच से भी परे हद तुम्हारी।
हां तर्क की सीमा से परे पार तुम्हारा ॥
अज्ञेय हो तुम, है यह आखिर को एथीईज्म।*
इन्कार भी आखिर को है इकरार तुम्हारा ॥

भज़न सं० २८

रहता है तापो तेज तपो बल के हाथ में।
जिस तरह चांदनी मेह अकमल के हाथ में॥
मिलना न मिलना उनको तो है कलके हाथ में।
पर दुःख है वह कल नहीं बेकल के हाथ में॥

---

* नास्तिकवाद

किसके तलाश की यह लगन है लगी हुई।
बिजली की लालटेन है बादल के हाथ में ॥
घेरा है लोभ, मोह ने इस तरह जीव को।
जैसे कोई शरीफ हो अरजल के हाथ में ॥
निर्लेप आत्मा तमोगुण से हुआ मलीन।
हीरा सियाह हो गया काजल के हाथ में।
हास करना पड़ता है अष्टांग योग का।
आता है मोक्ष मार्ग बहुत चलके हाथ में ॥

भजन सं० २६

अन्त समय में हे जगदीश्वर,
तेरा ही सुमिरण तेरा ही ध्यान हो।
काबू में होवें इन्द्रिय अपने,
वश में प्राण और अपान हो ॥अन्त०
खाली हो चित्त वासनाओं से अपना,
दुःख का न उसमें नामो निशान हो।

श्रद्धा से भरपूर मन होवे अपना,
भक्ति को हृदय में उत्कृष्ट स्थान हो॥ अन्त०
सत ही पै निर्भर हो काम अपने,
सत ही का अभ्यास, सत ही की आन ,हो।
जीते हों सत पर,मरते हों सत पर,
सत ही का गौरव सत ही का मान हो॥अंत०
भूलें न यम को, पालें नियम को,
जीवन में अपने तप ही प्रधान हो।
लवलीन हो प्रेम में तेरे ऐसे,
सुख की न सुधा हो, दुःख का न भान हो।
अन्त समय मे हे जगदीश्वर,
तेरा ही सुमिरण, तेरा ही ध्यान हो।

भजन सं० ३०

चन्द्र-मण्डल में कोई देखते आभा तेरी।
तेज सूरज का नहीं यह भी छाया है तेरी॥१॥
तेरी महिमा को प्रकट करती है रचना तेरी।

देखले आके जगत् में कोई महिमा तेरी ॥२॥

होठ वे होठ रहें जिन पै हो प्रशंसा तेरी।
मन वह मन हो कि भरी जिसमें श्रद्धा तेरी॥३॥

तेरी तकबीर की देती है गवाही दुनिया।
तेरी हस्ती की शहादत में है रचना तेरी ॥४॥

जिक्र सौसन की जुबाँ पर है तेरी रहमत।
सर्व इक पांव से करता है तपस्या तेरी ॥५॥

गोशे नाजुक में गुलेतर के छुपा भेद तेरा।
चश्मे नरगिस में निहां सूरते जेबा तेरी ॥६॥

हर तरफ खोज में फिरती है तेरे बादे सबा।
बुलबुलें बाग में करती हैं तमन्ना तेरी ॥७॥

कामना कोई नहीं जिसकी हो इच्छा बाकी।
दिल में इक तू है और इक मिलनेकी आशा तेरी

इक दृष्टि हो इधर भी कि इसी फल के लिये।
जप रहा हूँ मैं बहुत देर से माला तेरी। ६॥

भजन सं ३१

मैं उनके दरस की प्यासी ।।टेक।।

जिनका ऋषि मुनि ध्यान धरें नित,
योगी योगाभ्यासी । मैं उनके०

जिनको कहते अजर अशोकी
आश्रय जिनके सदा त्रिलोकी ।

जन्म मरण से रहित सदा शिव
काल मुक्त अविनाशी ।। मैं उनके० ।।

उत्पन्नकर्ता अमर वेद का,
लेश न जिसमें भेद छेद का ।

अचल अमृत अलौकिक अनुपम.
परिभू घट-घट वासी ।। मैं उनके० ।।

अतुल राज्य है जिसका जग पर,
सकल सृष्टि है जिसके अन्तर ।

अमीचन्द जिससे होते प्रकाशित
रवि शशि अग्नि प्रकाशी ।।मैं उनके० ।।

भजन सं० ३२

मन मतवारा इन्द्रिय दश में,
इन्द्रिय है विषयों के वश में ॥
कान मुग्ध रस में शब्दों के,
नेत्र रूप के जकड़े रस में ॥
बन्धा गन्ध से है घ्राणेन्द्रिय,
त्वचा फंसी स्पर्श सरस में ॥
भाँति-भांति के भक्ष्य भोज कर,
रसना उलझ रही षटरस में ॥
इस बन्धन से छुटकारा हो,
प्रभु करो मम-चित निज वश में

भजन सं० ३३

मन पछतैहैं अवसर बीते ।

दुर्लभ देह पाई प्रभुपद भज,
कर्म वचन मन ही ते ॥
सहसबाहु दसवदन आदि,
नृप बचे न काल बली ते ॥मन०
हम हम करि धन धान संवारे,
अन्त चले उठ रीते ॥ मन० ॥
सुत वनितादि जानि स्वारथ-रत,
न करू नेह सब ही ते ॥मन०॥
अन्तहु तोहि तजेंगे पामर,
तू न तजै अबही ते ॥ मन० ॥
अब नाथ ही अनुराग जागु,
जड़ त्यागु दुरासा जी ते ॥मन०॥
बुझै न काम अगिनि तुलसी,
कहुँ विषयभोग बहु पीते॥मन०॥

आर्य समाजों के सत्संग के नियम

श्रीमद्दयानन्द-जन्मशताब्दी सभा द्वारा नियत।

१—यह सत्संग प्रातःकाल रविवार को हुआ करे।

२—पहले सब मिलकर संध्या और अन्य वेद मन्त्र उच्चस्वर से मिलकर पढ़ें।

३—फिर हवन-यज्ञ हो।

४—फिर ईश्वर-स्तुति, प्रार्थना, उपासना के भजन हों।

५—तत्पश्चात् वेद तथा अन्य आर्षग्रन्थों का पाठ हुआ करे।

६—पुनः उपदेश हो।

७—भजन तथा ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त के इन ४ मन्त्रों का पाठ हो।

ॐ सं समिद् युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ। इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्याभर ॥

ऋ० १०।१९१।१॥

हे (वृषन्) बलवान् और (अर्य) श्रेष्ठ (अग्ने) तेजस्वी ईश्वर ! तुम (विश्वानि) सब पदार्थों को (इत्) निश्चय से (सं सं आ-युवसे) एकत्रित कर के सम्मिलित करते हो और (इलस्पदे) भूमि अथवा वाणी के स्थान में (सं इध्यसे) उत्तम प्रकार से प्रकाशित हो। इसलिये (सः) वह तुम (नः) हम सबके लिये (वसूनि) सब प्रकार से निवास साधक धन (आभर) प्राप्त कराओ।

ॐ संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥

ऋ० १०।१९१।२॥

हे भक्तो ! तुम सब (संगच्छध्वं) एक होकर प्रगति करो। (संवदध्वं) एक दूसरे से मिलकर अच्छी प्रकार बोलो। (वःमनांसि)तुम सबके मन (सं जानताम्) उत्तम संस्कारों से युक्त हों। तथा (पूर्वे) पूर्वकालीन (सं जानाना देवाः) उत्तम ज्ञानी और व्यवहार-चतुर लोग (यथा) जिस प्रकार (भागं)अपने कर्त्तव्य का भाग (उप आसते) करते आये हैं उसी प्रकार तुम भी अपना कर्त्तव्य करते जाओ।

ॐ समानो मंत्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥

ऋ० १०।१९१।३॥

तुम सबका (मन्त्र)विचार (समानः) एक हो, (समितिः) तुम्हारी सभा (समानी) सबकी एक जैसी हो। (मनःसमानं) तुम सब का मन एक विचार से युक्त हो। (एषां चितं सह) इन सबका चित्त भी सब के साथ ही हो। (वः) तुम सबको (समानः मन्त्रः) एक ही विचार से (अभिमन्त्रये) युक्त करता हूं और (वः) तुम सब को (समानेन हविषा) एक प्रकार के अन्न और उपभोग(जुहोमि) देता हूँ।

ॐसमानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥
ऋ० १०।१६१।४॥

(वः आकूतिः) तुम सब का ध्येय समान ही हो। (वः हृदयानि)तुम सब के हृदय समान हों। (वः मनः) तुम सबका मन (समानम्) समान

हो। (यथा) जिससे (वः) तुम सब का व्यवहार (सह सु असति) समान होवे।

८—आवश्यक सूचना इत्यादि देकर शान्ति पाठ से सभा समाप्त हो।

भजन सं० ३४

धर्म वैदिक है हमारा, 'आर्य' प्यारा नाम है।
वेद के अनुसार, जग बनाना काम है ॥१॥
ब्रह्म की पूजा करें भ्रम, भेद दूजा दूर कर।
सच्चिदानन्दादि मंगल, मूल अज, अभिराम है ॥
वेद का पढ़ना पढ़ाना, परमपावन धर्म है।
सत्यविद्या का वही वर, विश्वविद्या धाम है॥३॥
सत्य स्वीकृति, अनृत त्याग में सदा उद्यत रहें।

धर्मनीति विचार से हो, सर्वदा सब काम है॥४॥

विश्व का उपकार करना, मुख्य यह उद्देश्य है।

सर्व सामाजिक समुन्नति में कभी न विराम है॥

विविध मत फैले हुए, करके सभी का सामना

सत्य पर सबको चलावें धर्म का संग्राम है ॥६॥

वेदहित जीवन हमारा, वेदहित मरना भला

वेद-शाला शून्य कोई भी, न होवे ग्राम है ॥७॥

वेद सूर्य प्रकाश में, ऋषि के प्रदर्शित पाथ में

प्राण भी जावें चले, पर धर्म में आराम है ॥८॥

नोट— आरती भजन (ओं जय जगदीश हरे) देखो पृष्ठ ५८ ।

प्रवेश-पद्धति

श्रीमद्दयानन्द जन्मशताब्दी सभा ने प्रवेश (शुद्धि) पद्धति विद्वानों से निर्माण कराई है, उसे

नीचे लिखते हैं, उसी के अनुसार प्रवेश (शुद्धि) संस्कार करना उचित है। जिस जन्म के वैदिक धर्म को न मानने वाले पुरुष व स्त्री को आर्य समाज यानी आर्यजातिमें प्रवेश करना हो उसको अपने २ देश में प्रचलित रीति से हजामत कराके (यदि स्त्री हो तो क्षौर न करावे) भली भांति स्नान कराके, स्वच्छ वस्त्र पहना के, वेदी पर सभा के बीच में उससे नीचे के मन्त्रों का पाठ कराया जाये और अर्थ भी सुना दिया जाये। ये ही मन्त्र बोलकर आचार्य उसके ऊपर कुछ जल का छींटा भी देदे। मन्त्र यह है:—

पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनंतु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥

यजु० १९।३९॥

(देवजनाः) हे सब विद्वान् और श्रेष्ठ पुरुषो! आप (मा) मुझ को (पुनन्तु) पवित्र कीजिए, आप (मनसा) मन के साथ (धियः) बुद्धियों को भी (पुनन्तु) पवित्र करें, (विश्वा) सब (भूतानि) प्राणी अर्थात् पुरुष स्त्री आपकी कृपा से मुझे (पुनन्तु) पवित्र करें, (जातवेदः) हे ज्ञानी आचार्य! आप भी (मा) मुझे इन सब के सामने (पुनीहि) पवित्र कीजिये।

पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देव दीद्यत्। अग्ने क्रत्वा क्रतून् ॥२॥

यजु० १९।४० ॥

(देव) हे शुभगुणयुक्त (अग्ने) हे ज्ञान के प्रकाश-कारक आचार्य! आप (दीद्यत्) देदीप्यमान होते हुए (शुक्रेण) शुद्ध पवित्रेण) पवित्र कर्म से (मा) मुझे (पुनीहि) पवित्र करें। (क्रतून्) और

मेरे यज्ञों को ध्यान में रखकर (कृत्वा) यज्ञ-कर्म से मुझ को पवित्र कीजिये।

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा। ब्रह्म तेन पुनातु माम् ॥यजु ६। ४०॥

(अपने) हे ज्ञान से तेजस्वी आचार्य! (ते) आप की (अर्चिषि) अग्नि की लपट के तुल्य चमकदार बुद्धि के (अन्तरा) अन्दर (यत्) जो (पवित्र) शुद्ध (ब्रह्म) वेदज्ञान (विततं) फैला या भारी है (तेन) उससे (मा) मुझे (पुनातु) पवित्र कीजिए अर्थात् उसका उपदेश कीजिए, ताकि मैं अपना आचरण वेदानुकूल कर सकूं।

पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा॥

यजु० १९।४२॥

(पवमानः) वेद का उपदेश करके पवित्र करने वाला (विचर्षणिः) किए तथा न किए हुए सब को जानने वाला है (सः) वह परमात्मा (अद्य) आज (नः) हमें (पवित्रेण) हमेशा पवित्र कर्म करने के उपदेश से (पुनातु) पवित्र करे। और (यः) जो (पोता) स्वभाव अर्थात् बिना स्वार्थ के कारण से ही पवित्र करने वाला है। (सः) वह परमात्मा (मा) मुझे पवित्र करे अर्थात् आज मैं सब के सामने परमात्मा से यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि कभी वेद विरुद्ध कार्य न करूंगा, जिससे कि अपवित्र होऊं।

इन मन्त्रों के पाठ के बाद वेदि के ऊपर आसन पर बैठकर आचार्य 'शन्नो देवी०' मन्त्र से उसे आचमन करावे और 'यज्ञोपवीत' पहनावे तथा 'गायत्री मन्त्र' का उच्चारण करावे, संक्षेप में अर्थ भी सुना देना उचित है। फिर यथाविधि प्रार्थनामन्त्र, स्वस्ति-

वाचन, शान्तिपाठ और सामान्य प्रकरण के सम्पूर्ण हवन को समाप्त करके पूर्णाहुति 'सर्वं वै पूर्णं स्वाहा' से पहले नीचे के मन्त्रों से आहुति देनी चाहिये।

यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वँहसः॥१

(देवा: देवास:) हे विद्वानों! (वयं) हमने (यत्) जो (देवहेडनं) विद्वानों का अपराध (चकृमा) किया है। (अग्नि) यह यज्ञ की भौतिक अग्नि या ज्ञानी आचार्य या प्रकाशस्वरूप परमात्मा (तस्मात्) उस (पापात्) पाप से (मा) मुझे (मुञ्चतु) छुड़ावे और (विश्वात्) समस्त (अंहस:) पाप से छुड़ावे।

यदि दिवा यदि नक्तमेनाँसि चकमा वयम्।
वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वँहसः॥२

(यदि) अगर (दिवा) दिन में, (यदि) अगर

(नक्तं) रात में (स्वयं) हमने (एनांसि) पाप (चकृमा) किये हैं तो (वायुः) भौतिक वायु और अपने ज्ञान से सर्वत्र पहुँच सकने वाला आचार्य और ईश्वर मुझे पाप से मुक्त करें।

यदि जाग्रद् यदि स्वपन् एनाँसि चकृमा वयम् । सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वँ हसः ॥ ३ ॥

यदि (जाग्रत्) जागते हुए (यदि) (स्वपन्) सोते हुए (वयं एनांसि चकृमा) हमने पाप-आचरण किये हैं तो (सूर्यः) भौतिक सूर्य, ज्ञान का प्रकाशक आचार्य और परमात्मा मुझे इन पापाचरणों से दूर करे।

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये । यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधिधर्मणि, तस्यावयजनमसि ॥४॥

यजु० । २० । १७ ।

(यत्) जो (ग्रामे) गांव में (यत् अरण्ये) जो जंगल में (यत् सभायां) जो सभा में परनिन्दा, (यत् इन्द्रिय) परनारी दर्शनादि, (यत् शूद्रे) शूद्र सम्बन्धी, (यत् अर्ये) जो स्वामी के प्रति (एनः) पाप (वयं) हम (चकृमा) कर चुके हैं। (एकस्य) स्त्री-पुरुष दोनों में से एक के भी (अधिधर्मणि) कर्त्तव्य के विघ्न करने में (तस्य) उस पाप के, हे आचार्य! आप (अवयजनम्) नाशक (असि) हों।

अगर कोई जन्म से वेद विरोधी न हो, किसी कारणवश पतित (वेद विरोधी ईसाई, यवन आदि मत में प्रविष्ट हो गया हो और वह वैदिकधर्मियों में पुनः प्रविष्ट होना चाहे तो उससे नीचे लिखे मन्त्र का पाठ भी कराया जाय। जन्म के पतित से भी इस मन्त्र का पाठ कराना अनुचित नहीं:—

यद् विद्वांसो यदविद्वांस एनांसि चकृमा वयम्
यूयं नस्तस्मान्मुञ्चत विश्वेदेवाः सजोषसः ॥
अथर्व ६ । ११५।१॥

(विद्वांस: अविद्वांस:) जान बूझ कर या बिन जाने मूर्खता से (वयं) हमने (यत् यत्) जो जो (एनांसि) पाप (चकृमा) किये हैं। (यूयं) आप (विश्वेदेवा: वे) सब विद्वान् पुरुष (सजोषस:) प्रीति के साथ (तस्मात्) उस पाप समुदाय से (न:) हमको (मुञ्चत) पृथक् करदो।

इसके बाद अर्थ सहित गायत्री का पाठ भी उससे कराना चाहिए। फिर नीचे के मन्त्र से एक आहुति देकर पूर्णाहुति (ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा) करा दी जाए।

ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम् । इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि ॥
यजु० १ । ५ ॥

हे (व्रतपते, अग्ने) व्रतों के पालक ! विद्वद्गण या ईश्वर ! मैं (व्रतम्) प्रण या व्रत का (चरिष्यामि) पालन करूंगा । (तत्) मैं उसको करने में (शकेयं) समर्थ होऊं (मे) मेरा (तत्) वह (राध्यतां) पूरा हो, मैं इस असत्य को छोड़ कर सत्य को (उपैमि) प्राप्त होता हूँ ।

भजन ३५

तुम्हारी कृपा से जो आनन्द पाया,
वो वाणी से जावेगा क्योंकर बताया।
नहीं है यह वह रस जिसे रसना चाखे,
नहीं रूप उसका कभी दृष्टि आया।
नहीं यह वह गन्ध जो घ्राण सूंघे,
त्वचा से न जावे वह छूआ छुआया।
न संख्या में आना भी सम्भव है उसका,
दिशा काल में भी नहीं वह समाया।
न तुझसा है दाता न कोई और दानी,
कि इतना बड़ा दान जिसने दिलाया।
चरित्रोन्नति में तुम्हारी दया से,
मेरी जिन्दगी ने अजब पलटा खाया।

वह सत् है, वह चित् है, वह आनन्दमय है,
मुझे मेरे अनुभव ने निश्चय कराया।
अमीचन्द गूंगे की रसना के सदृश,
वह कैसे बतावे कि क्या रस उड़ाया।

भजन ३६

मत हीरा जन्म गंवाओ, कुछ कर लो नेक कमाई
खप खप के धन माया जोड़ी,
बन गए लखपति और करोड़ी।
चलती बार यहीं सब छोड़ी,
क्यों तुम जान खपाओ।
नहीं साथ चले इक पाई ॥ १ ॥
परम गुरु वेदों को मानो।
इष्टदेव ईश्वर को जानो।
मत गफलत का तम्बू तानो।

धन धर्म्म कमाओ ।
होगा वही अन्त सहाई ॥ २ ॥
इन्द्रियों को वस में राखो ।
प्रेम पिया का अमृत चाखो ।
सत्य कहो, पर कटु न भाखो ।
अपना जगत् बनाओ ।
तुम ले लो मुफ्त भलाई ॥ ३ ॥
शम, दम, धीरज मन में धारो ।
पाप कर्म से रहो न्यारो ।
गायत्री का अर्थ विचारो ।
गुण ईश्वर के गाओ ।
चाहते हो यदि भलाई ॥ ४ ॥

भजन ३७

अय विश्वनाथ मन का चञ्चलपना मिटा दे ।

कुटिया में शान्ति के आनन्द से बिठादे ।
अज्ञान मेरा मुझ से अय नाथ दूर करादे ।
अज्ञानता से कारज बिगड़े सभी बना दे ॥
ऐसा अनुग्रह करदे, खुल जाय ज्ञान-चक्षु ।
उन चक्षुओं से अपने प्रकाश को दिखा दे ॥
दुनिया के जो विषय हैं उनसे है जंग मेरी ।
अपनी दयालुता से मुझको फतह दिलादे ॥
खुदमतलबी छुड़ादे, सेवा में करदे तत्पर ।
उपकार पर पराये मेरी कमर बंधादे ॥
भटका हुआ मुसाफिर बहका हुआ है फिरता ।
मंजिल पै जल्द पहुँचे वह रास्ता बतादे ॥
केवल तेरी लगन में बेसुध रहूँ हमेशा ।
प्रीति का अपने प्याला ऐसा मुझे पिलादे ॥

भजन ३८

भज ले ओंकार रे मन मूर्ख अनारी ।
चार दिनन के जीवन खातिर कैसा जाल पसारी ।
कोई न जावत संग तुम्हारे मात-पिता सुत-नारी ।।
पाप कपट से संचित कर धन मूर्ख मौत बिसारी ।
ब्रह्मानन्द जन्म यह दुर्लभ देत वृथा किम डारी ।।

भजन ३९

शरण प्रभु की आओ रे ! यही समय है प्यारे ।
आओ हरि गुण गाओ रे ! यही समय है प्यारे ।।
उदय हुआ ओ३म् नाम का भानु,
आओ दर्शन पाओ रे ।। १ ।।
अमृत झरना झरता इससे,
पी के अमर हो जाओ रे ।।

ईर्ष्या, द्वेष, कपट को त्यागो,
सत में चित्त लगाओ रे ॥३॥
हरि की भक्ति बिना न मुक्ति,
दृढ़ विश्वास जमाओ रे ॥ ४ ॥
कर लो नाम हरि का सुमरन,
अन्त को न पछताओ रे ॥५॥
छोटे बड़े सब मिल के खुशी से,
गुण ईश्वर के गाओ रे ॥ ६ ॥

भजन ४०

जो हरि गीत प्रीति संग गाये।
तिसके शोक निकट नहीं आये।
अमृत बन तेरो चरित्र मनोहर।
मन की तपत बुझाये ॥ १ ॥

उधरे पतित अधम अति पापी।
जो तव शरण में आये।
हे प्रभु हम अति दुखिया होकर।
तव शरणागत आये ॥ २ ॥
परम सुखदाता ज्ञान प्रदाता।
तैं यह नाम धराये।
मांग रहे द्वारे पर याचक।
अब क्या देर लगाये ॥ ३ ॥
विषयन से उपराम रहूँ।
यों भक्ति हृदय में भाये।
पढ़ सुन वेद वेदाङ्ग अमीचन्द।
संशय भ्रम मिटाये ॥४॥

भजन ४१

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन,

उसे कोई कलेश लगा न रहा।
जब ज्ञान की गंगा में न्हाया,
तो मन में मैल जरा न रहा ॥१॥
परमात्मा को जब आत्मा में,
लिया देख ज्ञान की आंखों से।
प्रकाश हुआ मन में उस के,
कोई उससे भेद छिपा न रहा ॥२॥
पुरुषार्थ ही इस दुनिया में,
सब कामना पूरी करता है।
मन चाहा सुख उसने पाया,
जो आलसी बनके पड़ा न रहा ॥३॥
दुखदायी हैं, सब शत्रु हैं,
यह विषय हैं जितने दुनिया के।
वही पार हुआ भवसागर से,
जो जाल में इनके फंसा न रहा ॥४

यह वेद विरुद्ध जब मत फैले,
पत्थर की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लोप हुई,
तो ज्ञान का पात्र जमा न रहा ॥५
यहाँ बड़े बड़े महाराज हुए,
बलवान हुए विद्वान् हुए।
पर मौत के पंजे से केवल,
संसार में कोई बचा न रहा ॥६॥

भजन ४२

पायें किस प्रकार हम जगदीश दर्शन आपका।
कौनसी ज्योति से हो प्रकाश भगवन् आपका ॥
चांद सूरज आपका प्रकाश कर थकते नहीं।
उनके भी प्रकाश का है प्रकाश कारण आपका ॥
खींच लेता है यह सारे विश्व की तसवीर पर।
कर नहीं सकता कदापि मनभी चिन्तन आपका।

आप इसकी तो पहुंच से ही परे हैं हे प्रभु।
हो सके क्योंकर भला वाणी से वर्णन आपका॥
जड़ जगत् तक पहुंच कर रह गई सब इन्द्रियां।
रूप क्या अनुभव करे यह शुद्ध चेतन आपका॥
हैं हमारी शक्तियाँ इस काम में बे-अर्थ सब।
है अनुग्रह, आपके दर्शन का साधन आपका॥
कर्मबल से हीन हूँ मैं तप नहीं, भक्ति नहीं।
किन्तु शरणागत हुआ है मेरा तनमन आपका॥
कीजिये स्वीकार मुझको, दीजिये दर्शन दिखा।
आत्मा में हो मेरे अब प्रेम पूरण आपका॥
शुद्ध होकर मेरा हृदय आपका मन्दिर बने।
जिससे हो प्रकाश इसमें दुःखभंजन आपका॥

भजन ४३

टेक—प्रीतम तू ही प्रेम का धाम

जग से प्रीत करी बहुतेरी,
मिला न कुछ विश्राम॥ प्रीतम०

तेरे प्रेम अमृत से प्यारे, जीता विश्व तमाम ।
स्वच्छ समीर मेघ इत्यादिक,
सभी प्रेम के काम ॥ प्रीतम० ॥
एक बार भी जिसने पिया, तेरे प्रेम का जाम ।
जीवन भर प्रेम प्रेम का,
उसमें हुआ मुकाम ॥ प्रीतम०॥
प्रेम स्वरूप जोगेश्वर कहके,
ऋषि मुनि करें प्रणाम ।
गावें गीत प्रेममय होकर,
ले ले तेरा नाम ॥ प्रीतम० ॥
डूबे तेरे प्रेमसिन्धु में, गिरिधर स्वामी राम ।
मैत्रेयी मीरा, तुलसी,
सूर तुकाजी राम ॥ प्रीतम० ॥
है निमग्न रस सागर में,
रसिक शिरोमणि श्याम ।
ले चल अब नवरत्न मुझे भी,
जहाँ प्रभु का धाम ॥ प्रीतम०॥

भजन ४४

हे जगत् पिता ! हे जगत् प्रभु,
मुझे अपना प्रेम और पियार दे।
तेरी भक्ति में लगे मन मेरा,
विषय कामना को विसार दे।
मुझे ज्ञान और विवेक दे,
मुझे वेद वाणी में दे श्रद्धा।
मुझे मेधा दे, मुझे ज्ञान दे,
मुझे बुद्धि और विचार दे।
मुझे ओज दे, मुझे तेज दे,
दे स्वास्थ्य और आरोग्यता।
दे पूर्ण आयु अदीनता,
मुझे शोभा लोक मंझार दे।
मुझे धर्म कर्म से प्रेम हो,
तजूँ सत्य को न कभी भी मैं।

कोई चाहे सुख मुझे दे घना,
कोई चाहे कष्ट हजार दे।
कभी दीन हूं न जगत् में मैं,
मुझे दीजे सच्ची स्वतन्त्रता।
मेरे फन्द पाप के काट दे,
मुझे दुःख से पार उतार दे।
रहूं मैं अभय न हो मुझको भय,
किसी मित्र और अमित्र से।
तेरी शिक्षा का हो बल मुझे,
मेरे भीरु मन को तू टार दे।
मुझे दुश्चरित से परे हटा,
सुचरित का भागी बना मुझे।
मेरे मन को, वाणी को शुद्ध कर,
मेरे सारे कार्य सुधार दे।
मेरा हृदय क्षोभ से हो रहित,

मिले नित्य शान्ति हर जगह।
मेरे शत्रुगण में भी हो सुमति,
कुमति को उनकी निवार दे।
तेरी आज्ञा में मैं रहूं सदा,
तेरे सामने रहे सर झुका।
कभी हो न मुझमें अधीरता,
मैं पतित हूं, तू ही उभार दे।

भजन ४५

हमने ली है फकत इक तुम्हारी शरण
हे पिता और कोई हमारा नहीं।
पतित पावन अब दो सहारा हमें,
आसरा और कोई हमारा नहीं।
न बुद्धि, न भक्ति, न विद्या का बल,
हृदय पै चढ़ा पाप कर्मों का मल।
है तुम्हारी दया का फकत आसरा,

तुमने किस-किस को स्वामी उभारा नहीं ॥

हुए मोह माया के वश में यहां,
फंसे लोभ क्रोध और अहंकार में।
पड़ी नैया अपनी है मंझधार में,
नजर आता कोई किनारा नहीं ॥

अविद्या है यह कैसी छाई हुई,
सभी कर्म धर्म की सफाई हुई।
आस तुम से है ईश्वर लगाई हुई,
यही द्वार है और द्वारा नहीं ॥

यहां वेदपाठी न ज्ञानी रहे,
न योद्धा रहे और न दानी रहे।
बचा लो पिता ! हे पिता लो बचा,
और हर पै तो जाना गवारा नहीं।

यह विनती है मेरी पिता मान लो,
अनाथों के दुःखों को पहचान लो।

तुम्हीं सब के अज्ञान को जान लो,
हाथ किसी को और पसारा नहीं ॥

भजन ४६

पीकर तेरा प्याला हो जाऊं मतवाला ।
प्रेम की बाती प्रेम का दीपक,
प्रेम की होवे ज्वाला ।
मन मन्दिर में जगमग कर,
हो जाये उजियाला ॥
मेरे घर के अन्दर बहता,
होवे प्रेम का नाला ।
जब जब प्यास लगे उसमें से,
भर कर पीलूं प्याला ॥
धो दे प्रेम-वारि से अब तू,
मन मेरा मटियाला ।
तेरे प्रेम के रङ्ग में रङ्ग कर,

हो जाऊं रङ्गियाला ॥
प्रेम-अश्रु से सिंचित
प्रेम बाग लगे हरियाला।
प्रेम प्रसून लगे हों,
उसमें उनकी गूंथूं माला।

भजन ४७

यही है आरजू भगवन् !
मेरा जीवन यह आला हो।
पर-उपकारी सदाचारी व,
लम्बी उमर वाला हो।
सरलता, शीलता, एकता हो,
भूषण मेरे जीवन के।
सचाई सादगी श्रद्धा से मन,
सांचे में ढाला हो।
तजूं छल झूठ चालाकी,
बनूं सत्संग अनुरागी।

गुनाहों और खताओं से,
मेरा जीवन निराला हो ॥
तेरी भक्ति में ओ भगवन्,
लगादूं अपना मैं तन मन-धन
दिखावे के लिये हाथों में,
थैली हो न माला हो ॥
मेरा वेदोक्त हो जीवन,
कहाऊं धर्म अनुरागी ।
रहूं आज्ञा में वेदों की,
न हुक्मे वेद टाला हो ॥
तजूं सब खोटे भावों को,
तजूं सब बासनाओं को ।
तेरे विज्ञान-दीपक का,
मेरे मन में उजाला हो ॥
सदाचारी रहूँ हर दम,
बुराई दूर हो मन से ।

क्रोध और काम ने मुझ पर,
न जादू कोई डाला हो ॥

मुसीबत हो कि राहत हो,
रहूँ हर हाल में सानन्द ।

न घबराऊं, न पछताऊं,
न कुछ फरयादो नाला हो।

पिलादे मोक्ष की घुट्टी,
मरन जीवन से हो छुट्टी ।

विनय अन्तिम यह अर्जुन की,
अगर मंजूरे वाला हो ॥

॥ इति शुभम् ॥